दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

निर्णय की तिथि: 15 जनवरी, 2024

रि.या.(आप.)1978/2022 एवं आप.वि.आ.17120/2022

विवेक कुमार .....याचिकाकर्ता

द्वारा: श्री श्रेष्ठ जैन, अधिवक्ता।

बनाम

राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली राज्य सरकार एवं अन्य ..... प्रत्यर्थीगण

द्वारा: सुश्री रूपाली बंदोपाध्याय, अति.स्था.अधि. सह श्री अभिजीत कुमार, अधिवक्ता सह उप.नि. घनश्याम, पुलिस थाना एस.बी. डेयरी
श्री नितिन गोयल, प्र-2 के लिए अधिवक्ता।

कोरम:

माननीय न्यायमूर्ति सुश्री ज्योति सिंह

निर्णय

न्या. ज्योति सिंह (मौखिक)

1. यह याचिका याचिकाकर्ता द्वारा भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के साथ पठित दं.प्र.सं. की धारा 482 के अंतर्गत दायर की गई है, जिसमें दं.प्र.सं. की धारा 107/111 और कलंदरा दिनांक 24.04.2022 के अंतर्गत नोटिस को अभिखंडित करने की माँग की गई है।

2. आवश्यक और प्रासंगिक सीमा तक तिथियों और घटनाओं का कालानुक्रम और जैसा कि याचिका में किए गए विवरण से उभर रहा है, यह है कि याचिकाकर्ता के पिता, श्री राकेश कुमार फ्लैट सं. 402, ब्लॉक-डी, सेक्टर -29, चौथी मंज़िल, रोहिणी, नई दिल्ली (इसके बाद "विषयगत परिसर" के रूप में संदर्भित) का मालिक है, जिसका स्वामित्व और शीर्षक याचिकाकर्ता के पिता और प्रत्यर्थी सं. 2 के पति के बीच 22.02.2013 को निष्पादित हस्तांतरण विलेख से आता है। यह प्रकथन किया गया है कि प्रत्यर्थी सं. 2 का पति श्री अनिल कुमार भारतीय रेलवे में टी.टी.ई के रूप में काम करता है और उसने आवासीय प्रयोजन के लिए किराये पर फ्लैट लेने के लिए अक्टूबर, 2018 में याचिकाकर्ता के पिता से संपर्क किया था। प्रत्यर्थी सं. 2 और उसके पति द्वारा यह दर्शाया गया था कि उन्हें अपने स्वयं के उपयोग के लिए परिसर की आवश्यकता है और वे सर्वोत्तम संभव तरीके से फ्लैट की देखभाल करेंगे।

3. आगे बयान दिया गया है कि प्रत्यर्थी सं. 2 और उसके पति की बातों पर विश्वास करते हुए, याचिकाकर्ता के पिता 15.09.2018 से शुरू होने वाली 22

महीने की अवधि के लिए फ्लैट को किराए पर देने के लिए सहमत हुए और 20.10.2018 को प्रत्यर्थी सं. 2 के पति और याचिकाकर्ता के पिता के बीच एक किराया अनुबंध निष्पादित किया गया और विषयगत परिसर को 11 महीनों के लिए 15,000/- रुपये के मासिक किराये पर और अगले 11 महीनों के लिए 16,500/- रुपये के किराये पर दे दिया गया। किरायेदार द्वारा सुरक्षा राशि के रूप में 30,000/- रुपये जमा करने पर सहमति हुई।

4. याचिकाकर्ता का मामला यह है कि 15.07.2020 को किरायेदारी समाप्त हो गई और याचिकाकर्ता के बार-बार अनुरोध करने के बाद भी, किरायेदारों द्वारा विषयगत परिसर खाली नहीं किया गया था और इसलिए, 15.07.2020 के बाद से उनकी स्थिति अनधिकृत अधिभोगियों की थी। फरवरी, 2022 में, प्रत्यर्थी सं. 2 के पति ने सूचित किया कि उन्हें सोनीपत में एक फ्लैट आवंटित किया गया था, लेकिन इसके बाद भी उन्होंने किरायेदारी परिसर को खाली नहीं किया। 24.04.2022 को, याचिकाकर्ता के पिता विषयगत परिसर का निरीक्षण करने गए और पाया कि एक अजनबी ने उक्त परिसर पर कब्ज़ा कर लिया था और यह स्पष्ट था कि किरायेदारी परिसर को उप-किराए पर दिया गया था। परिसर पर कब्ज़ा करने वाले व्यक्ति की स्थिति का पता लगाने के लिए तुरंत पुलिस को बुलाया गया। बाद में शाम को, प्रत्यर्थी सं. 2 और उसके पति द्वारा पुलिस के समक्ष एक बयान दिया गया कि तीसरा व्यक्ति उनका नौकर था और तदनुसार,

शिकायत बंद कर दी गई थी। 16.08.2022 को फिर से, जब याचिकाकर्ता और उसके पिता विषयगत परिसर में गए, तो उन्हें वहाँ एक चौथा व्यक्ति रहता हुआ मिला और प्रत्यर्थी सं. 2 के पति से संपर्क करने पर कोई जवाब नहीं मिला।

5. विषयगत परिसर को खाली करने के बजाय, याचिकाकर्ता को बहुत आश्चर्य हुआ कि, प्रत्यर्थी सं. 2 और उसके पति ने याचिकाकर्ता के विरुद्ध शिकायत की कि वह उन्हें गंभीर परिणाम भुगतने की धमकी दे रहा है और इसके परिणामस्वरूप, याचिकाकर्ता को विशेष कार्यकारी दंडाधिकारी ('एसईएम') के समक्ष उपस्थित होने के लिए दं.प्र.सं. की धारा 107/111 के अंतर्गत व्हाट्सएप के माध्यम से 02.08.2022 को एक नोटिस मिला। आरटीआई आवेदन दायर करने के बाद भी याचिकाकर्ता को कलंदरा की प्रति उपलब्ध नहीं कराई गई। वर्तमान याचिका में इस नोटिस और कलंदरा को ही चुनौती दी गई है।

6. याचिकाकर्ता की ओर से उठाए गए प्रतिवाद यह हैं कि आक्षेपित नोटिस अवैध है क्योंकि कथित घटना या धमकी कभी दी ही नहीं थी और प्रत्यर्थी सं. 2 और उसके पति द्वारा केवल विषयगत परिसर पर अवैध रूप से कब्ज़ा करने और क्षति किराये का भुगतान करने के दायित्व से बचने के लिए झूठी शिकायत की गई थी। नोटिस के परिशीलन से पता चलता है कि यह एक पूर्व-मुद्रित प्रारूप है और इसमें केवल वर्तमान मामले से संबंधित नाम, तिथि और कुछ अन्य विवरण भरे गए हैं। दं.प्र.सं. की धारा 107(1) के अंतर्गत नोटिस जारी करने से

पहले एसईएम द्वारा किसी प्रकार की जाँच की जाने की आवश्कता होती है जो स्पष्ट रूप से वर्तमान मामले में नहीं हुई है। एसईएम ***मधु लिमये और अन्य बनाम वेद मूर्ति और अन्य, ए.आई.आर. 1971 एस.सी. 2481*** मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित दं.प्र.सं. की धारा 107 के अंतर्गत शक्ति का प्रयोग करने के लिए आवश्यक अनिवार्य सावधानियों और सुरक्षा उपायों का पालन करने में विफल रहे हैं। विद्वान एसईएम ने इस बात की भी अनवेक्षा कर दी है कि कलंदरा की ओर ले जाने वाली शिकायत और आक्षेपित नोटिस मकान मालिक-किरायेदार के विवाद से उत्पन्न हुआ है और इसलिए, एसईएम को ***राम प्रकाश और अन्य बनाम राज्य, 1996 एस.सी.सी. ऑनलाइन दिल्ली 314*** में इस न्यायालय के निर्णय का पालन करना चाहिए था, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा ***आप.वि.वा. 3581/2006*** में ***सुषमा अरोड़ा बनाम राज्य और अन्य*** में 15.02.2008 को अभिनिर्धारित किया गया था। याचिकाकर्ता की ओर से दृढ़ता से तर्क दिया गया है कि एसईएम ने ***आशा पंत बनाम राज्य और अन्य, 2008 एस.सी.सी. ऑनलाइन दिल्ली 367*** मामले में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित दिशानिर्देशों का उल्लंघन करते हुए नोटिस जारी किया है, यहाँ तक कि मामले की न्यूनतम जाँच के बिना भी और इस विवेकरहित कार्य को उचित नहीं ठहराया जा सकता है और इस प्रकार आक्षेपित नोटिस और कलंदरा को अभिखंडित करने की आवश्यकता है।

7. इसके विपरीत, राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अति.स्था.अधि. प्रस्तुत करते हैं कि यद्यपि पूर्व-मुद्रित प्रारूप का उपयोग किया गया था, लेकिन नोटिस में विवरण विवेकहीन रूप से नहीं भरे गए थे और एसईएम ने आक्षेपित नोटिस जारी करने का निर्णय लेने से पहले की गई शिकायत पर अपने विवेक का उपयोग किया था। निर्देश पर प्रत्यर्थी सं. 2 के विद्वान अधिवक्ता ने स्पष्ट रूप से कहा कि इस न्यायालय द्वारा ***आशा पंत (पूर्वोक्त)*** में की गई टिप्पणियों को ध्यान में रखते हुए, याचिका को अनुमति दिए जाने पर उसे कोई आपत्ति नहीं है।

8. इस स्तर पर, यह उल्लेख करना आवश्यक है कि जब यह याचिका 13.08.2022 को ग्रहण की गई थी, तो न्यायालय ने निर्देश दिया था कि संबंधित एसईएम के समक्ष कार्यवाही सुनवाई की अगली तिथि तक स्थगित रहेगी और अंतरिम आदेश आज तक प्रभावी है, जिसके परिणामस्वरूप कलंदरा और नोटिस के अनुसार कोई आगे की कार्यवाही नहीं हुई है।

9. दं.प्र.सं. की धारा 107(1) एक कार्यकारी दंडाधिकारी को जानकारी मिलने पर कि, संभाव्य है कि कोई व्यक्ति परिशांति भंग करेगा या लोक प्रशांति विक्षुब्ध करेगा या कोई ऐसा सदोष कार्य करेगा जिससे संभाव्यतः परिशांति भंग हो जाएगी या लोक प्रशांति भंग हो जाएगी, उस व्यक्ति को कारण बताओ नोटिस जारी करने की शक्ति देती है। दं.प्र.सं. की धारा 107(1) में महत्वपूर्ण शब्द हैं *'यदि उसकी राय में कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है तो'*। इसलिए,

दं.प्र.सं. की धारा 107(1) को पढ़ने से यह स्पष्ट है कि नोटिस जारी करने से पहले, दंडाधिकारी को जानकारी प्राप्त होने पर एक राय बनानी चाहिए कि कार्यवाही करने के लिए यह एक पर्याप्त आधार है और एक बार यह राय बन जाने के बाद ही वह नोटिस जारी करने के लिए आगे बढ़ सकता है। राय का गठन आम तौर पर दंडाधिकारी द्वारा कुछ प्रारंभिक जाँच पर आधारित होना चाहिए जो इस राय के गठन को न्यायोचित ठहराएगा। ***आशा पंत (पूर्वोक्त)*** के मामले में इस न्यायालय ने दं.प्र.सं. की धारा 107/111 के अंतर्गत नोटिस की वैधता का परीक्षण करते हुए कहा कि नोटिस जारी करना एक द्वि-चरणीय प्रक्रिया है। सबसे पहले, दंडाधिकारी को एक जानकारी प्राप्त होती है, जिस पर वह एक राय गठित करता है और इस राय के आधार पर वह नोटिस जारी करता है, जो दूसरा चरण है। यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि राय किसी तरह की प्रारंभिक जाँच पर आधारित होनी चाहिए, हालाँकि इसे अनम्य माना जा सकता क्योंकि ऐसे मामले भी हो सकते हैं जहाँ एसईएम को परिशांति या लोक प्रशांति को भंग होने से को रोकने के लिए तुरंत एक राय बनाने की आवश्यकता हो, लेकिन यह एक अपवाद होना चाहिए न कि नियम। न्यायालय ने दं.प्र.सं. की धारा 107 के अंतर्गत शक्तियों का प्रयोग करते समय एसईएम द्वारा बरती जाने वाली सावधानियों की अनिवार्य प्रकृति पर भी ज़ोर दिया और ***मधु लिमये (पूर्वोक्त)*** में उच्चतम न्यायालय की संविधान पीठ के निर्णय का संदर्भ देते हुए

अभिनिर्धारित किया है कि शक्तियों का प्रयोग बहुत ध्यान और सावधानी से किया जाना चाहिए और हर चरण में एसईएम को ऐसी कार्रवाई करने के लिए कारण बताना होगा। ***आशा पंत (पूर्वोक्त)*** का निर्णय विशेष रूप से वर्तमान मामले के लिए प्रासंगिक है क्योंकि न्यायालय ने चेतावनी की एक और टिप्पणी भी संलग्न की है कि जहाँ विवाद अनिवार्य रूप से मकान मालिक और किरायेदार के बीच है, वहाँ दं.प्र.सं. की धारा 107 के अंतर्गत नोटिस केवल पुलिस द्वारा तैयार किए गए कलंदरा के परिशीलन और किसी प्रकार की प्रारंभिक जाँच के आधार पर एसईएम द्वारा स्वतंत्र राय बनाए बिना किया गया इस तरह का विवेकरहित कृत्य शक्ति के प्रयोग को अमान्य होने के लिए असुरक्षित बना देगा। निर्णय के प्रासंगिक पैराग्राफ निम्नानुसार हैं:-

> *"**13.** दं.प्र.सं. की धारा 107 (1) एसईएम को किसी व्यक्ति को कारण बताओ नोटिस जारी करने की शक्ति देती है कि "वह कारण दर्शित करे कि उसे एक वर्ष से अनधिक की इतनी अवधि के लिए, जितनी दंडाधिकारी नियत करना ठीक समझे, परिशांति कायम रखने के लिए उसे प्रतिभुओं सहित या रहित बंधपत्र निष्पादित करने के लिए आदेश" क्यों न दिया जाए। धारा में परिकल्पना की गई है कि एसईएम को उपरोक्त कार्रवाई उस जानकारी के आधार पर करनी चाहिए जो उसे प्राप्त हुई है कि संभाव्य है कि ऐसा व्यक्ति परिशांति भंग करेगा, लोक प्रशांति विक्षुब्ध करेगा और ऐसी जानकारी प्राप्त होने पर उसे "यह राय बनानी चाहिए कि यह कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है।" उपरोक्त धारा की शब्दावली ही इंगित करती है कि यह द्वि-चरणीय प्रक्रिया है। सबसे पहले, दंडाधिकारी को जानकारी प्राप्त होती है जिस पर वह एक राय गठित करता है। ऐसी राय*

के आधार पर वह नोटिस जारी करता है। यह दूसरा चरण है। ऐसा तब होता है जब जिस व्यक्ति को ऐसा नोटिस जारी किया जाता है, वह प्रतिक्रिया देता है या प्रतिक्रिया देने में विफल रहता है, जैसा भी मामला हो, तब धारा 111 के उपबंध लागू होंगे और ऐसे व्यक्ति को बंधपत्र प्रस्तुत करने के लिए कहने का आदेश दिया जा सकता है।

14. *दं.प्र.सं. की धारा 107 के अंतर्गत शक्तियों का प्रयोग करते समय एसईएम द्वारा बरती जाने वाली सावधानियों की अनिवार्य प्रकृति को मधु लिमये बनाम वेद मूर्ति, एआईआर 1971 एससी 2481 मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा समझाया गया है। संविधान पीठ ने स्पष्ट किया कि धारा 107 "व्यवस्थित समाज की सहायता के लिए है और परिशांति और लोक प्रशांति को नष्ट करने वाले आचरण पर अंकुश लगाने का प्रयास करती है। इस प्रयोजन के लिए लोक परिशांति और व्यवस्था के संरक्षण के लिए दंडाधिकारियों को बड़ी न्यायिक वैवेकिक शक्तियाँ प्रदान की जाती हैं। "इसके बाद न्यायालय ने उस निर्णय के पैरा 36 में प्रक्रियात्मक सुरक्षा उपायों के महत्व को समझाया जो निम्नानुसार है:-*

> *"36. हमने धारा 107 के उपबंध देखे हैं। उस धारा में कहा गया है कि कार्रवाई "इसके बाद प्रदान किए गए तरीके से" की जानी है और यह स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि ऐसे मामले में दंडाधिकारी किसी भी पर्याप्त सीमा तक प्रक्रिया से हटने के लिए स्वतंत्र नहीं है। यह बहुत हितकारी है क्योंकि इसमें व्यक्ति की स्वतंत्रता शामिल है और विधि उचित ही चिंताशील है कि इस स्वतंत्रता को केवल अपनी प्रक्रिया के अनुसार ही कम किया जाना चाहिए, न कि संबंधित दंडाधिकारी की इच्छा के अनुसार। इसलिए, हमारे लिए यह आवश्यक है कि हम प्रक्रिया में निर्मित सुरक्षा उपायों पर ज़ोर दें क्योंकि इसी से लोक व्यवस्था के हित में या आम जनता के हित में प्रतिबंधों की तर्कसंगतता पर विचार किया जाएगा।"*
>
> *(ज़ोर दिया गया)*

15. *इसके बाद, पैरा 44 में न्यायालय ने दंडाधिकारी को हर चरण पर अपने कारण लिखित में बताने की आवश्यकता के बारे में बताया, जो निम्नानुसार है:–*

> *"44. इस अध्याय के अंतर्गत प्रदान की गई शक्ति संविधान के अनुच्छेद 22 के अंतर्गत कार्यकारी कार्रवाई द्वारा निरोध की शक्ति से अलग है। हालाँकि अपराध करने से पहले जारी किया गया बंधपत्र निष्पादित करने का आदेश एक प्रशासनिक आदेश की तरह दिखता है, लेकिन वास्तव में इसका चरित्र न्यायिक होता है। मुख्य रूप से यह उपबंध दंडाधिकारी को बंधपत्र के निष्पादन की माँग करने और व्यक्ति को निरोध में नहीं लेने में सक्षम बनाता है। ऐसे बंधपत्र के निष्पादन में चूक होने पर ही निरोध में लिया जाता है। इसलिए, इस उपबंध को अनुच्छेद 22 द्वारा निरोध हेतु अनुध्यात एक विधि के रूप में वर्णित करना उचित है। इसलिए सुरक्षा उपाय अलग हैं। जिस व्यक्ति को बाध्य करने की माँग की गई है उसके पास अधिकार हैं जो समन मामले का विचारण एक अभियुक्त को प्रदान करता है। इस आदेश पर वरिष्ठ न्यायालयों में भी प्रश्न उठाया जा सकता है। इस कारण से, विधि के अनुसार हर चरण पर दंडाधिकारी को अपने कारण लिखित में बताने की आवश्यकता होती है। यह उसकी कार्रवाई को पूरी तरह से प्रशासनिक बना देगा यदि वह बिना किसी जाँच के और कम से कम प्रथम दृष्टया उस जानकारी की सच्चाई की जाँच किए बिना अंतरिम बंधपत्र के लिए आदेश पारित कर दे, जिस पर व्यक्ति को कारण बताने के लिए कहने वाला आदेश आधारित है। न तो अध्याय की योजना और न ही धारा 117 की योजना ऐसी व्याख्या को सहन कर सकती है।"*
>
> *(ज़ोर दिया गया)*

16. *उच्चतम न्यायालय की उपरोक्त टिप्पणियों से यह बिल्कुल स्पष्ट है कि धारा 107 और उसके बाद की धारा के अंतर्गत शक्तियों का प्रयोग*

कार्यकारी दंडाधिकारी द्वारा बहुत ध्यान और सावधानी के साथ किया जाना चाहिए। प्रत्येक चरण में एसईएम को ऐसी कार्रवाई करने के कारण बताने की आवश्यकता होगी।

17. *इस न्यायालय ने तविंदर कुमार और एक अन्य बनाम राज्य, 40 (1990) डी.एल.टी. 210 में भी दं.प्र.सं. की धारा 107 और 111 के अंतर्गत शक्तियों का प्रयोग करते समय सावधानी बरतने की आवश्यकता पर ज़ोर दिया। इस विषय की विद्यमान विधि को ध्यान में रखने और उपरोक्त उपबंधों के अंतर्गत शक्तियों के दायरे का विश्लेषण करने के बाद, इस न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की:–*

> *"(9) संक्षेप में, विधि के उपरोक्त उपबंधों से पता चलता है कि वर्तमान मामले में पुलिस द्वारा दी गई कलंदरा की जानकारी की प्राप्ति पर, दंडाधिकारी धारा 107 के अनुसार अपनी राय अभिलिखित करने के लिए और उसके बाद धारा 111 के अंतर्गत एक नोटिस, जिसमें इस तरह से प्राप्त जानकारी का सार होना चाहिए, तैयार करने के लिए बाध्य था और संबंधित व्यक्ति को समन देने के साथ-साथ ऐसी जानकारी की एक प्रति भेजने के लिए बाध्य था। धारा 116 (3) के अंतर्गत कोई भी आदेश पारित करने का चरण याचीगण को धारा 111 और 113 द्वारा आवश्यक समन देने और नोटिस दिए जाने और जाँच शुरू होने के बाद ही उत्पन्न हो सकता है। यह वास्तव में आश्चर्य की बात है कि विद्वान दंडाधिकारी ने जाँच के संबंध में अपना विवेक उपयोग करने से पहले या जाँच शुरू होने से पहले ही संहिता की धारा 116(3) के अंतर्गत एक आदेश तैयार कर लिया था। यह एक न्यायिक अधिकारी से अपेक्षित न्यायिक दृष्टिकोण नहीं है जो न्यायिक तरीके से ऐसे मामलों का निर्णय करने के लिए बाध्य है।"*

18. *उपरोक्त चर्चा का कुल सार यह है कि प्रत्येक मामले में, एसईएम के लिए धारा 107 में परिकल्पित चरणों का उसके बाद निर्धारित दं.प्र.सं. के उपबंधों में उल्लिखित प्रक्रिया के अनुसार सख्ती से पालन करना अनिवार्य*

होगा। ऐसे चरणों से पहले एक दंडाधिकारी द्वारा लिखित रूप में एक राय बनाई जानी चाहिए जिसे न्यायालय में निर्णय को चुनौती दिए जाने पर समझा जा सके। राय का ऐसा गठन, आम तौर पर, कुछ प्रारंभिक जाँच पर आधारित होना चाहिए जो किसी राय के गठन को न्यायोचित ठहराने के लिए एसईएम द्वारा किया जाना चाहिए। निःसंदेह इसे अनम्य नहीं माना जा सकता क्योंकि ऐसे मामले भी हो सकते हैं जहाँ एक एसईएम परिशांति या लोक प्रशांति के भंग होने को रोकने के लिए तुरंत एक राय बनाने की आवश्यकता हो। हालाँकि, यह अपवाद होना चाहिए, नियम नहीं। उदाहरण के लिए, जैसा कि वर्तमान मामले में है, जहाँ विवाद अनिवार्य रूप से किसी संपत्ति में पड़ोसियों के बीच, या एक ही परिसर में रहने वाले मकान मालिक और किरायेदार के बीच है, दं.प्र.सं. की धारा 107 के अंतर्गत नोटिस केवल पुलिस द्वारा तैयार किए गए कलंदरा के परिशीलन के आधार पर जारी नहीं किया जाना चाहिए। किसी प्रकार की प्रारंभिक जाँच के आधार पर एसईएम द्वारा स्वतंत्र राय गठित किए बिना किया गया इस तरह का विवेकहीन कृत्य शक्ति के प्रयोग को अमान्य होने के लिए असुरक्षित बना देगा।

19. *इस न्यायालय ने हाल ही में सुषमा अरोड़ा बनाम राज्य (आप.वि.वा. 35281/2006 में दिनांक 15 फरवरी, 2008 का आदेश) में अभिनिर्धारित किया था कि राम प्रकाश बनाम राज्य, 62 (1996) डी.एल.टी. 628 में इस न्यायालय के निर्णय का उस मामले में एसईएम द्वारा पालन किया जाना चाहिए था, जो वास्तव में एक मकान मालिक और किरायेदार के बीच का विवाद था। इस न्यायालय ने एसईएम को ऐसी स्थिति में दं.प्र.सं. की धारा 107 के अंतर्गत अपनी शक्तियों का उपयोग करने के प्रति आगाह किया है।*

20. *एसईएम द्वारा जारी किए गए आक्षेपित नोटिसों में ऐसा कुछ भी नहीं है जो यह दर्शाता हो कि एसईएम ने ऐसे नोटिस जारी करने से पहले धारा 107 के अंतर्गत आवश्यक एक राय गठित की थी। वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में आवश्यक न्यूनतम जाँच नहीं की गई। इसलिए, प्रथम दृष्टया, कोई भी नोटिस और समन विधि के अंतर्गत संधार्य नहीं रह*

सकता। किसी भी स्थिति में धारा 113 के अंतर्गत समन जारी करने का प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि यह एक बाद का चरण था और दं.प्र.सं. की धारा 107 के अंतर्गत नोटिस जारी करने के साथ-साथ इसका प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए था।

21. *हालाँकि 2 वर्ष से अधिक समय बीत चुका है और आक्षेपित नोटिस और समन अब प्रभावी नहीं हैं, क्योंकि प्रथम दृष्टया वे विधि की दृष्टि से संधार्य नहीं हैं, इसलिए उन्हें अवैध घोषित करना और उन्हें अभिखंडित करना आवश्यक हो जाता है। समय को देखते हुए दोनों कलंदरों को बंद करने का निर्देश दिया गया है। याचिकाओं और आवेदनों का तदनुसार निपटान किया जाता है।"*

10. इस संदर्भ में ***राम प्रकाश एवं अन्य (पूर्वोक्त)*** मामले में इस न्यायालय के एक अन्य निर्णय का उल्लेख करना उपयोगी होगा, जिसका इस न्यायालय ने ***सुषमा अरोड़ा (पूर्वोक्त)*** में पालन किया है। ***राम प्रकाश एवं अन्य (पूर्वोक्त)*** मामले में, यह न्यायालय कलंदरा को चुनौती देने और दं.प्र.सं. की धारा 107 के अंतर्गत इस आधार पर नोटिस देने की स्थिति में था कि यह धारा की पूर्व-आवश्यकताओं को पूरा नहीं करता था और कार्यकारी दंडाधिकारी द्वारा विवेक का बिल्कुल भी प्रयोग नहीं किया गया था, जिन्होंने धारा की भाषा को लिया, और अपने स्वयं के स्वतंत्र मूल्यांकन द्वारा कार्यवाही शुरू करने के लिए पर्याप्त आधार क्या था, यह बताए बिना उसे नोटिस में शब्दशः शामिल कर लिया। नोटिस एक मकान मालिक-किरायेदार विवाद से निकला है और न्यायालय ने यह टिप्पणी करते हुए कि दं.प्र.सं. धारा 107 के अंतर्गत शक्ति का प्रयोग केवल

तभी किया जा सकता है जब दंडाधिकारी प्राप्त जानकारी के आधार पर एक राय गठित करता है, यह भी टिप्पणी की कि किरायेदार द्वारा यह प्रदर्शित करने के लिए कोई उदाहरण अभिलेख पर नहीं लाया गया कि मकान मालिक ने लोक प्रशांति या परिशांति को भंग किया है और केवल बार-बार शिकायतें और जवाबी शिकायतें दायर करना अपराध नहीं कहलाएँगी जिसके लिए दं.प्र.सं. की धारा 107 के उपबंधों का अवलंब लिया जा सकता है। निर्णय के प्रासंगिक पैराग्राफ निम्नानुसार हैं:-

> ***"4.*** *याचीगण की शिकायत यह है कि कार्यकारी दंडाधिकारी ने बिना विवेक का इस्तेमाल किए संज्ञान लिया और दं.प्र.सं. की धारा 107/111 के अंतर्गत उन्हें नोटिस जारी किया। यह कलंदरा दं.प्र.सं. की धारा 107 के प्रावधानों को पूरा नहीं करता है। इसलिए दं.प्र.सं. की धारा 111 के अंतर्गत नोटिस जारी करना विशेष कार्यकारी दंडाधिकारी की ओर से पूरी तरह से विवेक का प्रयोग न करने को दर्शाता है। नोटिस जारी करते समय बताया गया कारण निम्नानुसार है:-*
>
> > *"जबकि धानाध्यक्ष कोटला मुबारकपुर की रिपोर्ट से ऐसा प्रतीत होता है कि आप, आशुतोष, पुत्र राम प्रकाश, निवासी 212 सुखदेव विहार, का डी.एन. श्रीवास्तव, निवासी बी-48, एन.डी.एस.ई-I, नई दिल्ली, से संपत्ति सं. बी-48, एन.डी.एस.ई.-I पर कब्ज़े/खाली कराने को लेकर डी.एन. श्रीवास्तव से विवाद है। आप गहरे मतभेद हैं और आप गलत कार्यों में लिप्त हैं और इसके परिणामस्वरूप पुलिस थाना कोटला मुबारकपुर, दिल्ली में भा.दं.सं. की धारा 341/506 के अंतर्गत प्राथमिकी सं. 469/95, भा.दं.सं. की धारा 341 के अंतर्गत प्राथमिकी सं. 484/95, भा.दं.सं. की धारा 448/427/323 के अंतर्गत प्राथमिकी सं. 507/95, भा.दं.सं. की धारा 448/323 के अंतर्गत प्राथमिकी सं.*

541/95 के माध्यम से क्रॉस केस दर्ज किए गए हैं। फिर भी आप डी.एन. श्रीवास्तव को डरा-धमका रहे हैं तथा थाना कोटला मुबारकपुर क्षेत्र में अशांति फैला रहे हैं। आपके गलत कृत्यों से परिशांति एवं लोक प्रशांति भंग होने की आशंका है।

आपके द्वारा गलत कार्य करने की संभावना है, जिसके परिणामस्वरूप मेरे अधिकार क्षेत्र की स्थानीय सीमा के भीतर परिशांति भंग हो सकती है और चूँकि मैं पुलिस रिपोर्ट से संतुष्ट हूँ कि यह आपके विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार हैं।"

5. *इस नोटिस को पढ़ने से पता चलता है कि कार्यकारी दंडाधिकारी ने केवल धारा की भाषा को लिया और अपने नोटिस में उसी का उपयोग किया है। उन्होंने स्वयं संज्ञान लेने का कोई आधार नहीं दिया है।*

6. *मैंने याचिकाकर्ता सं. 1 और राज्य के अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख का परिशीलन किया है। माना गया है कि विशेष कार्यकारी दंडाधिकारी द्वारा दिनांक 18 दिसंबर, 1995 को जारी चुनौती के अंतर्गत नोटिस विवेक का उपयोग न करने को दर्शाता है। उन्होंने धारा की भाषा को लिया है और शब्दशः अपने नोटिस में शामिल कर दिया है, बिना यह बताए कि इन कार्यवाहियों को शुरू करने का पर्याप्त आधार क्या था। केवल धारा की भाषा को शब्दशः शामिल करने से उनकी व्यक्त राय नहीं गठित नहीं होगी। इन कार्यवाहियों को शुरू करने के लिए पर्याप्त आधार होना चाहिए जिसका इस नोटिस में अभाव है। दं.प्र.सं. की धारा 107 उन व्यक्तियों पर लक्षित है जो ऐसे आचरण की उचित आशंका पैदा करते हैं जिससे परिशांति भंग होने या लोक प्रशांति विक्षुब्ध होने की संभावना हो। यह निवारक न्याय का एक उदाहरण है जिसे न्यायालय प्रशासित करने का इरादा रखते हैं। यह धारा 106 की तरह है, जो व्यवस्थित समाज की सहायता के लिए है और परिशांति और लोक प्रशांति के लिए विध्वंसक आचरण को रोकने का प्रयास करती है। उसी प्रयोजन के लिए यह दंडाधिकारियों को बड़ी न्यायिक विवेकाधीन शक्तियाँ प्रदान करता है। धारा 107 के अंतर्गत निहित शक्ति*

वहाँ लागू होगी जहाँ दंडाधिकारी जानकारी के आधार पर अपनी राय की पुष्टि करते हैं कि जब तक उन्हें व्यक्ति ऐसा करने से नहीं रोका जाएगा, वह लोक परिशांति और लोक प्रशांति को नुकसान पहुँचाने वाला कार्य करता रहेगा। लेकिन वर्तमान मामले में, विवाद मुख्य रूप से मकान मालिक और किरायेदार के बीच है। दोनों व्यक्तियों का परिशांति या लोक प्रशांति भंग करने से कोई लेना-देना नहीं है। अभिलेख में ऐसा कोई उदाहरण नहीं लाया गया है जो यह दर्शाता हो कि मकान मालिक द्वारा किरायेदार के विरुद्ध शिकायत दर्ज कराने से किस तरह लोक प्रशांति भंग हुई या परिशांति भंग होने वाली थी। बार-बार की गई शिकायतें और जवाबी शिकायतें किसी अपराध का गठन नहीं करेंगी जिसके लिए दं.प्र.सं. की धारा 107 के उपबंधों का अवलंब लिया जा सकता है।

7. *राज्य की ओर से उपस्थित श्रीमती संतोष कोहली ने प्रतिवाद दिया कि याचीगण ने किरायेदार को जान से मारने की धमकी दी थी और किरायेदारी परिसर में अतिक्रमण किया था। 17 दिसंबर, 1995 को जाँच अधिकारी द्वारा किरायेदार और उसकी पत्नी का बयान दर्ज करने के बाद ही कलंदरा दायर किया गया था। ये तर्क न केवल हैरान करने वाला है बल्कि चौंका देने वाला भी है। यह पुलिस द्वारा सत्ता के दुरुपयोग को उजागर करता है। पड़ोसियों या कथित प्लंबर, जिसकी उपस्थिति में यह बयान दिया गया था कि याचीगण ने धमकी दी थी, से तथ्यों की पुष्टि करने के बजाय जाँच अधिकारी ने किरायेदार और उसकी पत्नी के परिसाक्ष्य पर भरोसा करते हुए याचीगण के विरुद्ध पर मामला दर्ज किया। यह पुलिस द्वारा विधि के प्राधिकरण के प्रति सम्मान के अभाव को दर्शाता है। जाँच अधिकारी ने तथ्यों को सत्यापित करने की जहमत नहीं उठाई बल्कि शिकायतों पर अंकुश लगाने के लिए आसान तरीका अपनाया और कलंदरा दर्ज कराई। क्या श्री श्रीवास्तव की शिकायत और उनकी पत्नी के बयान को यह राय बनाने के लिए पर्याप्त सामग्री कहा जा सकता है कि लोक प्रशांति विक्षुब्ध होने वाली थी या परिशांति भंग होने वाली थी। मेरी राय में, इस सामग्री पर कोई कार्रवाई नहीं की जा सकती थी। दं.प्र.सं. की धारा 107 के अनुसार*

*व्यक्ति के विरुद्ध कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार होना आवश्यक है। लेकिन इस मामले में, मुझे किरायेदार द्वारा मकान मालिक के विरुद्ध शिकायत के अतिरिक्त और कोई पर्याप्त आधार नहीं मिला। जैसा कि पहले ही ऊपर बताया गया है, किराये का भुगतान न करने, रास्ते पर अनधिकृत कब्ज़ा करने, बिजली बिल बकाया का भुगतान न करने के मामले उपयुक्त न्यायालयों के समक्ष **न्यायाधीन** हैं। अब याचिकाकर्ता के विरुद्ध यह कलंदरा जारी कर पुलिस ने एक पक्ष के विरुद्ध दूसरे पक्ष को फायदा पहुँचाने का प्रयास किया है। यह दं.प्र.सं. की धारा 107 के उपबंधों का दायरा नहीं है। धारा 107 का प्रयोजन लोक प्रशांति और परिशांति का संरक्षण करना है, जो इस मामले के तथ्यों में प्रश्नगत ही नहीं है। यह धारा विशेष कार्यकारी दंडाधिकारी को सिविल प्रकृति के विवादों का न्यायनिर्णयन करने या संपत्ति के स्वामित्व या अधिकारों के अधिकार के प्रश्न पर निर्णय लेने की कोई शक्ति प्रदान नहीं करती है। इस शक्ति का प्रयोग उन अधिकारों की सहायता के लिए और उन लोगों के विरुद्ध होना चाहिए जो वैध कार्यों में हस्तक्षेप करते हैं और यहाँ तक कि ऐसे मामले में भी जहाँ कोई घोषित या स्थापित अधिकार नहीं हैं। शक्ति का प्रयोग इस तरह से नहीं किया जा सकता है जिससे विवाद में एक पक्ष को दूसरे पक्ष से अधिक भौतिक लाभ मिल सके। विचाराधीन किसी पक्ष द्वारा अधिकार के वैध प्रयोग में हस्तक्षेप करना विशेष कार्यकारी दंडाधिकारी की ओर से विवेक का उचित प्रयोग नहीं होगा। विधिक अधिकार को विनियमित किया जाना चाहिए और पूरी तरह से प्रतिबंधित नहीं किया जाना चाहिए। मौजूदा मामले में, वर्तमान याचिकाकर्ता द्वारा दर्ज की गई शिकायत के अतिरिक्त, पुलिस को यह सूचित करने के अपने अधिकारों का प्रयोग करते हुए कि किरायेदार डी.एन. श्रीवास्तव ने पट्टे की संविदा को भंग करते हुए उनके हिस्से पर जबरन कब्ज़ा कर लिया है, याचीगण द्वारा और कुछ नहीं किया गया है। दूसरी ओर, श्री डी.एन. श्रीवास्तव ने याचीगण के विरुद्ध शिकायत दर्ज कराई, जिसके बारे में याचीगण का कहना है कि यह प्रतिकार के चलते किया गया था। अभिलेख में मौजूद तथ्यों के आधार पर यह संभावना सही*

*हो सकती है। जब किरायेदार की पत्नी श्रीमती मीना श्रीवास्तव ने अपना लिखित बयान दिया, तो उसने कहीं भी यह नहीं कहा कि याचीगण ने कोई हमला किया या उनके बर्तन फेंके। लेकिन जब दं.प्र.सं. की धारा 161 के अंतर्गत उसका बयान दर्ज किया गया तो उसने अपना पूरा बयान यह कहकर बदल दिया कि वर्तमान याचीगण ने उसका सामान भी बाहर फेंक दिया था। यह एक प्लंबर की मौजूदगी में किया गया था। पुलिस ने उक्त प्लंबर से उसके बयान की सत्यता के बारे में जाँच नहीं की। **प्रथम दृष्टया,** पुलिस फ़ाइल की समीक्षा करने पर, मुझे शिकायत में आरोपों को सिद्ध करने वाला कोई तथ्य नहीं मिला और न ही इन आरोपों से परिशांति या लोक प्रशांति भंग होने का खतरा है। मैं इसे एक उपयुक्त मामला मानता हूँ जहाँ इस न्यायालय को अपने अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए दं.प्र.सं. की धारा 107/111 के अंतर्गत शुरू की गई कार्यवाही को अभिखंडित कर देना चाहिए क्योंकि इन कार्यवाहियों को शुरू करने से, मेरे विचार से, उन याचीगण के प्रति पूर्वाग्रह उत्पन्न हुआ है जिनके साथ कथित तौर पर गलत हुआ था न कि उन्होंने कुछ गलत किया था।"*

11. ***मधु लिमये (पूर्वोक्त)*** मामले में उच्चतम न्यायालय की संविधान पीठ के निर्णय का संदर्भ देना अत्यधिक प्रासंगिक होगा, जिसमें उच्चतम न्यायालय ने कहा कि कोई दंडाधिकारी दं.प्र.सं. की धारा 107 में निर्धारित प्रक्रिया से हटने के लिए स्वतंत्र नहीं है, जो हितकारी है क्योंकि इसमें व्यक्ति की स्वतंत्रता शामिल है और विधि उचित ही चिंताशील है कि इस स्वतंत्रता को केवल अपनी प्रक्रिया के अनुसार ही कम किया जाना चाहिए, न कि संबंधित दंडाधिकारी की इच्छा के अनुसार। उच्चतम न्यायालय की बाध्यकारी अभ्युक्ति और उपरोक्त निर्णयों में इस न्यायालय की टिप्पणियों को वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू करते हुए,

इस न्यायालय का मानना है कि आक्षेपित नोटिस को एक से अधिक कारणों से विधि में संधार्य नहीं रखा जा सकता है। आक्षेपित नोटिस के परिशीलन मात्र से पता चलता है कि यह एक पूर्व-मुद्रित प्रारूप है और इसमें केवल तिथियाँ, नाम आदि ही भरे गए हैं। याचिकाकर्ता ने गंभीरता से प्रकथन दिया है कि नोटिस जारी करने से पहले कोई प्रारंभिक जाँच नहीं की गई थी और एसईएम द्वारा कोई स्वतंत्र राय गठित नहीं की गई थी, जो दं.प्र.सं. धारा 107 के अंतर्गत नोटिस जारी करने की दिशा में पहला चरण है और विद्वान अति.स्था.अधि. द्वारा इस स्थिति का खंडन नहीं किया गया था। नोटिस पूरी तरह से थानाध्यक्ष की रिपोर्ट पर आधारित है कि याचिकाकर्ता ने प्रत्यर्थी सं. 2 को धमकी दी थी और उसके झगड़ा किया था और याचिकाकर्ता को दं.प्र.सं. की धारा 107 के अंतर्गत नोटिस जारी करने से पहले प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से अभिलेख पर कोई सामग्री नहीं रखी गई है, जो दूर से भी संकेत देता है कि एसईएम द्वारा एक स्वतंत्र मूल्यांकन किया गया था और/या एक राय बनाई गई थी कि परिशांति या लोक प्रशांति भंग होने का खतरा था। ***आशा पंत (पूर्वोक्त)*** मामले में, इस न्यायालय ने मकान मालिक-किरायेदार विवाद में पुलिस द्वारा तैयार किए गए कलंदरा के आधार पर केवल दं.प्र.सं. की धारा 107 के अंतर्गत नोटिस जारी करने वाले दंडाधिकारी के कृत्य की निंदा की है और न्यायालय ने टिप्पणी कि कम से कम न्यूनतम जाँच पर स्वतंत्र राय बनाए बिना एसईएम के इस तरह के

विवेकरहित कृत्य से नोटिस असुरक्षित हो जाएगा। इस प्रकार आक्षेपित नोटिस को विधि के तहत संधार्य नहीं रखा जा सकता। प्रत्यर्थीगण के अधिवक्तागण भी इस तथ्य पर विवाद नहीं करते हैं कि चूँकि आक्षेपित नोटिस जारी किए जाने के बाद एक वर्ष बीत चुका है, इसलिए दं.प्र.सं. की धारा 107(1) की स्पष्ट भाषा को ध्यान में रखते हुए यह अब और भी प्रभावी नहीं है।

12. उपरोक्त सभी कारणों से, आक्षेपित नोटिस को अवैध घोषित किया जाता है और अभिखंडित किया जाता है और बीते हुए समय को देखते हुए, कलंदरा को बंद करने का निर्देश दिया जाता है।

13. लंबित आवेदन के साथ याचिका को अनुमति दी जाती है और उसका निपटान किया जाता है। दिनांक 13.08.2022 के अंतरिम आदेश को आत्यंतिक बनाया जाता है।

न्या. ज्योति सिंह

15 जनवरी 2024

एनएस/शिवम

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्द्मेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*